Vol 5 Issue 4 Oct 2015 ISSN No :2231-5063

International Multidisciplinary Research Journal

Golden Research Thoughts

Chief Editor
Dr.Tukaram Narayan Shinde

Publisher
Mrs.Laxmi Ashok Yakkaldevi

Associate Editor
Dr.Rajani Dalvi

Honorary
Mr.Ashok Yakkaldevi

Welcome to GRT

RNI MAHMUL/2011/38595 **ISSN No.2231-5063**

Golden Research Thoughts Journal is a multidisciplinary research journal, published monthly in English, Hindi & Marathi Language. All research papers submitted to the journal will be double - blind peer reviewed referred by members of the editorial board.Readers will include investigator in universities, research institutes government and industry with research interest in the general subjects.

Regional Editor

Manichander Thammishetty
Ph.d Research Scholar, Faculty of Education IASE, Osmania University, Hyderabad

International Advisory Board

Kamani Perera
Regional Center For Strategic Studies, Sri Lanka

Janaki Sinnasamy
Librarian, University of Malaya

Romona Mihaila
Spiru Haret University, Romania

Delia Serbescu
Spiru Haret University, Bucharest, Romania

Anurag Misra
DBS College, Kanpur

Titus PopPhD, Partium Christian University, Oradea,Romania

Mohammad Hailat
Dept. of Mathematical Sciences, University of South Carolina Aiken

Abdullah Sabbagh
Engineering Studies, Sydney

Ecaterina Patrascu
Spiru Haret University, Bucharest

Loredana Bosca
Spiru Haret University, Romania

Fabricio Moraes de Almeida
Federal University of Rondonia, Brazil

George - Calin SERITAN
Faculty of Philosophy and Socio-Political Sciences Al. I. Cuza University, Iasi

Hasan Baktir
English Language and Literature Department, Kayseri

Ghayoor Abbas Chotana
Dept of Chemistry, Lahore University of Management Sciences[PK]

Anna Maria Constantinovici
AL. I. Cuza University, Romania

Ilie Pintea,
Spiru Haret University, Romania

Xiaohua Yang
PhD, USA

......More

Editorial Board

Pratap Vyamktrao Naikwade
ASP College Devrukh,Ratnagiri,MS India

R. R. Patil
Head Geology Department Solapur University,Solapur

Rama Bhosale
Prin. and Jt. Director Higher Education, Panvel

Salve R. N.
Department of Sociology, Shivaji University,Kolhapur

Govind P. Shinde
Bharati Vidyapeeth School of Distance Education Center, Navi Mumbai

Chakane Sanjay Dnyaneshwar
Arts, Science & Commerce College, Indapur, Pune

Awadhesh Kumar Shirotriya
Secretary,Play India Play,Meerut(U.P.)

Iresh Swami
Ex - VC. Solapur University, Solapur

N.S. Dhaygude
Ex. Prin. Dayanand College, Solapur

Narendra Kadu
Jt. Director Higher Education, Pune

K. M. Bhandarkar
Praful Patel College of Education, Gondia

Sonal Singh
Vikram University, Ujjain

G. P. Patankar
S. D. M. Degree College, Honavar, Karnataka

Maj. S. Bakhtiar Choudhary
Director,Hyderabad AP India.

S.Parvathi Devi
Ph.D.-University of Allahabad

Sonal Singh,
Vikram University, Ujjain

Rajendra Shendge
Director, B.C.U.D. Solapur University, Solapur

R. R. Yalikar
Director Managment Institute, Solapur

Umesh Rajderkar
Head Humanities & Social Science YCMOU,Nashik

S. R. Pandya
Head Education Dept. Mumbai University, Mumbai

Alka Darshan Shrivastava
Shaskiya Snatkottar Mahavidyalaya, Dhar

Rahul Shriram Sudke
Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore

S.KANNAN
Annamalai University,TN

Satish Kumar Kalhotra
Maulana Azad National Urdu University

Address:-Ashok Yakkaldevi 258/34, Raviwar Peth, Solapur - 413 005 Maharashtra, India
Cell : 9595 359 435, Ph No: 02172372010 Email: ayisrj@yahoo.in Website: www.aygrt.isrj.org

Golden Research Thoughts
ISSN 2231-5063

Impact Factor : 3.4052(UIF)
Volume - 5 | Issue - 4 | Oct - 2015

GRT

संचार माध्यम और साहित्य

डॉ. रितु
सहायक प्रोफेसर (हिंदी विभाग) डीएवी कॉलेज करनाल , हरियाणा.

प्रस्तावना

समन्वय का संकट समय और स्थान की दूरियाँ अर्थहीन होकर रह गई हैं। से तो उन्नीसवीं सदी का उत्तरार्ध अर्थहीन होकर रह गई है। वैसे तो उन्नीसवीं सदी का उत्तरार्ध नए यांत्रिक आविष्कारों से शुरू हो गया था। अन्वेषणा और यांत्रिकता के नाम से नव्यतर अन्वेषण का यह क्रम अद्यतन अनवरत गतिशील है। इस सारे प्रौद्योगिकी एवं तकनीकी विकास को यदि गंभीरता से विवेचित किया जाए तो हम पाऐंगे कि सूचना क्रान्ति ने विश्व चेतना को सर्वाधिक प्रभावित किया है। " संचार माध्यम और साहित्य" विषय पर जब विचार करने के लिए बैठा तो मन–मस्तिष्क में एक प्रश्न अनायास कौन्ध गया कि आज इस तीव्रगामी संचार–युग में, जहाँ सारा साहित्य, मनोरंजन, प्रौद्योगिकी और दश्य–श्रव्य प्रसारण मीडिया के वर्चस्व आक्रान्त हो रहा है, तब साहित्य और इससे आगे बढ़कर कहे तो कला, संगीता तक के सामने अपनी अस्तित्व रक्षा का संकट प्रस्तुत हो गया है। जन साधारण को इन संचार माध्यमों के कारण वो सब सरल रूप से उपलब्ध हो रहा है, जो कभी उसे एकाग्रता और मनन से साहित्य के अनुशीलन के दिव्य क्षणों में आनन्द और विचार चेतना के रूप में प्राप्त होता था। यहाँ मैं वैचारिक अतिवाद के उस बिन्दू पर खड़ा होकर नहीं सोच रहा हूँ जहाँ जड़ होकर किसी भी परिवर्तन को नकार दिया जाता है। क्योंकि परिवर्तन इस जीव–सृष्टि का भंग नियम है। इसी परिवर्तनशीलता को राम अवतार त्यागी ने काव्याभिव्यक्ति देते हुए कहा है–

विश्व में परिवर्तनों का नाम केवल जिन्दगी,
रात की इन तड़पनों का नाम केवल जिन्दगी।
हो गया घिर जो उसे पाषाण कहना चाहिए।
उन विचारों को सदा श्मशान कहना चाहिए।

भारतीय संस्कृति की एक चिरन्तन विशिष्टता यह रही है कि इतिहास ओर अतीत इसके लिए घटनाओं का विवरण मात्र नहीं हैं। अपनी संस्कृति की जड़ों से जुड़कर भारतीयों ने सदैव अपना युगानुरुप विकास खोजा है। इसका सबसे प्रबल प्रमाण हिन्दी साहित्य का भक्तिकालीन युग है। हम सब यदि इसे हारी हुई हिन्दु जाति की हताशा मानें या फिर इसकी परम्परा को दक्षीण में बहुत पहले से विद्यमान कहें। तब भी दोनों स्थितियों को आदर देते हुए भक्तिकाव्य की भाव धारा तद्युगीन सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, स्थितियों के बीच भक्ति के साथ–साथ आस्था, विश्वास, ज्ञान, प्रेम और जन–प्रेरणा का अभूतपूर्व सन्देश लिए हुए हैं। जिन विपरीत परिस्थितियों में कबीर जैसे सन्त युग चेता और सामाजिक क्रान्ति का प्रचार कर गए तथा तुलसी जैसे भक्त रामचरित मानस जैसा समाज का नियामक – ग्रन्थ रच गए वह अन्य किसी संस्कृति के इतिहास में शायद ही देखने को मिलता है। यहाँ इस चर्च से अभिप्राय इतना ही है कि भरतीय संस्कृति में साहित्य केवल एक साहित्यकार की भविष्य अभिव्यक्ति नही होता। उसमें इतिहास, लोकनीति, धर्म, तथा जन अपेक्षाएँ भी अभिव्यक्ति पाती है।

आधुनिकता का आरम्भ हम विज्ञानवाद, वर्कवाद, तथा यांत्रिकता के अतिरिक्त पाश्चात्य दार्शनिकों के विचारों से पाते हैं आधुनिक जगत को चार्ल्स डार्विन के विकासवी सि(ान्त, कार्ल मार्क्स के द्व(ात्मक भौतिकवादी दर्शन, सिग्मन्ड फ्रॉयड के मनोविश्लेषणात्मक दृष्टिकोण तथा आइंस्टाईटन के समय सापेक्षता के सि(ान्त ने बहुत ही व्यापक रूप से प्रभावित किया। हिन्दी साहित्य में जो नयी आधुनिक प्रवृत्तियाँ अज्ञेय तक तथा उनके बाद भी दिखाई देती है वे सभी अपनी अभिव्यक्ति के उपादान इन्हीं पाश्चात विचारों से लेते प्रतीत होते हैं। क्षणवाद, असित्तववाद, अति यथार्थवाद, भौतिकवाद, भोगवाद आदि का हिन्दी साहित्य में आगमन पाश्चात्य दर्शन के अनुकरण से आयातित लगता है। इसी तथ्य की पुष्टि डॉ॰ एच. पद्मनामन कुछ यूँ करते हैं, पाश्चात्य विश्व द्वारा प्रदत्त ज्ञान–विज्ञान के अंधानुकरण के चलते हमारे देश के बु(िजीवी साहित्यकार पाश्चात्य काव्यशास्त्र में प्रचलित रोमांटिज्म, रियलिज्म से लेकर आधुनिकतावाद और उत्तर आधुनिकतावाद आदि को अपने यहां के साहित्य में प्रयोग करने में लग गए।" हमारे साहित्य में इस पाश्चात्य वैचारिकता के आगमन से जो परिवर्तन प्रकट

हुए वे भी विस्मयकारी थे।

आज से लगभग सौ–सवा सौ साल पहले आरम्भ हुए वैज्ञानिक तर्कवाद के चलते, जो अनास्थावाद और नास्तिकतावाद साहित्य में प्रचलित हुआ था, तथा विश्वासों और निष्ठाओं के समक्ष बड़े–बड़े प्रश्नवाचक लगाए जाने थे, तो भारतीय जनमानस के लिए ये उनकी परम्परा और विशेषरूप से आध्यात्मिक संस्कारों से विचलित करते से लग रहे थे। इसी बीच जर्मनी के दार्शनिक नीत्से ने 'ईश्वर मर गया है' की घोषणा करके विश्व को वैचारिक विभ्रम और पुनर्विचार के संकट में डाल दिया था। व्यक्ति को पहली बार वैज्ञानिक तर्कों के आधार पर उसकी वैयक्तिकता का आभास करवाने I यह सर्वप्रथम प्रयास तो इसलिए नहीं माना जा सकता कि इससे बहुत पहले भारतीय दर्शन और साहित्य में व्यक्ति, इसके जीवन और क्रियाओं को सत्य का आधार माना गया है। वेदों से लेकर आज तक के दार्शनिक और साहित्यिक उल्लेखों में व्यक्ति की सत्ता को स्वीकारते हुए बहुत कुछ कहा गया है। यहाँ तक कि कोई रचनाकार स्वयं को मानव समुदाय से भिन्न मानकर किसी अलौकि जगत् का सदस्य आज की घोर आधुनिकता के दबाव में भी नहीं होना चाहता। नागार्जुन की प्रस्तुत पंक्तियों में यही भाव निहित है–

कवि हूँ , सच है
किन्तु षट्पदों जैसा क्या मैं
फूल सूँघकर रह सकता हूँ?
कवि हूँ, सच है
पर अशोक के कोमल किसलम
पहन ओढ़कर ही कैसे मैं रह सकता हूँ
कवि हूँ, सच है
किन्तु क्षणिक तथ्यों को अवहेलित करके
शाश्वत का सीमान्त, कभी क्या छू पाऊँगा।
कवि हूँ पीछे, पहले तो मानव ही हूँ।

इस संचार –क्रान्ति के बीच भी जो रचनाकार साहित्य सृजन में लीन हैं, इनकी भावना इस कारण सराहनीय है कि वे न तो षट्पदों की तरह फूल सूंघकर रहते हैं और न ही अशोक के कोमल किसल ओढ़ पहन कर शाश्वत का सीमान्त छूपने की मिथ्या लाल सा रखते हैं। उन्हें यह अहसास सदा कर्मरत रखता है कि वह 'कवि' या साहित्यकार बाद में है और 'मानव' पहले है। किन्तु उसका समाज धार्मिता का मार्ग आज निर्बाध नहीं है। क्योंकि आज का रचनाकार अनेक दबावों और तनावों से गुजर रहा है इन्हीं दबावों में एक प्रमुख है साहित्य की वर्तमान परिवेश में शक्तिमत्रा को सि(करने का। जबकि साहित्य के बारे में फरवरी 2004 के विश्व पुस्तक मेले में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित साहित्यकार विद्याधर सूरज प्रसाद नायपॉल ने साहित्यकारों, समीक्षकों और पुस्तक प्रेमियों के बीच एक विचारोत्तेजक विवादास्पद वक्तव्य में घोषणा करते हुए कहा कि "साहित्यमर गया है।" वास्तव में 21वीं शताब्दी के उषाकाल में खड़े विश्व को एक चिन्ताजनक यथार्थ से अवगत करवाया गया है। हम चाहे साहित्य की शक्ति से गौरवान्वित होते हों तथा इसकी शाश्वतता पर कितने ही आश्वस्त रहें, किन्तु जिन संकटों से वर्तमान साहित्य को जूझना पड़ रहा है, उनको देखकर यदि साहित्य के समापन की घोषणा को अमान्य समझ लिया जाए तो भी साहित्य की अस्मिता को अनेक प्रश्नों ने घेर रखा है।

साहित्य के संदर्भ में प्रायः कहा जाता है कि साहित्य समाज का दर्पण है। परन्तु वास्तव में साहित्य समाज के दर्पण है। परन्तु वास्तव में साहित्य समाज के दर्द से कहीं आगे है। वह समाज का गव्यात्मक दर्पण है। साहित्य के धर्म को यदि तुलसी की इन पंक्तियों में खोजे तो भी हम किसी सार्थक निष्कर्ष तक पहुँच सकते हैं–

किरति भनित भूमि भलि सोई,
सुरसरि सम जो सब कर हित होई।

साहित्यकार अपनी रचना के माध्यम से अपने युगीन यथार्थों की समुचित पहचान करता है। वह अनेक बार अपने समय से आगे भी देखता है। समय से आगे देखने का काम हिन्दी साहित्य के अतीत में अनेक रचनाकारों ने किया भी है। अपने युगबोध का अतिक्रमण करने वाले ये रचनाकार अपनी कृत्ति का प्राण–तत्व यदि अपने परिवेश से लेते हैं तो वे इतिहास के संदर्भो को वर्तमान के लिए शिक्षकीय प्रेरणा के रूप में भी आदर देते हैं। इसीलिए साहित्य को आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने कुछ यूँ परिभावित किया है– "जबकि प्रत्येक देश का साहिब वहाँ की जनता की चिन्तवृत्ति का संचित प्रतिबिम्ब होता है तब यह निश्चित है कि जनता की चितवृत्ति के परिवर्तन होता चला जाता है।" साहित्य केवल रचनाकार के कल्पनालोक की भाषिक अभिव्यक्ति नहीं है। इसी में एक बृहत् समाज का प्रतिनिधि भी मिलता है। साहित्य अनुशीलक के आनन्द तक सीमित नहीं होना चाहिए। साहित्य से उस शक्ति की अपेक्षा भी है जो समाज को नई दिशा देने का साहस रखे। वह समाज की विसंगतियों को व्यक्त करने मात्र से संतुष्ट नहीं है। वह समाज के अनुशासित बनाने की संकल्पना भी है।

वर्तमान साहित्य अपने समय के सभी पक्षों से साक्षात्कार करता है। वह अपनी स्थिति की बेचारगी पर साधकर नहीं रहता। उसके स्वर में वर्तमान युग–जीवन के खतरों के प्रति आक्रोश है। आज की इस सिमटती दुनिया मं यांत्रिकता बढ़ रही है और संवदेनशील घट रही है। वैश्वीकरण का सबसे नकारात्मक प्रभाव मानवीय सम्बन्धों में आ रही संवदेनहीनता को माना जा सकता है। आज के विश्व में सूचना मानवीय भावनाओं पर हावी हो चली है। साहित्य का सीधा सम्बन्ध संवेदना से है। जबकि आज का विश्व सूचना तंत्र की यांत्रिकता से ग्रस्त है। यह संघर्ष मानव और मशीन के बीच का संघर्ष है। इस स्थिति को युगीन रचनाकारों ने अवहेलित नहीं किया इसीलिए)तु कुमार कहते है।

यह समय चुप रहने का नहीं
बल्कि चुप रहकर बोलते जाने का है
बोलते जाने का अर्थ
खुद को खाली करना नहीं
अपितु जटिल होते वक्त को परखना भी है

हमेशा की तरह बोलना
आज भी अभिव्यक्ति के विरु(एक खतरा है।
समय को संवदेकनाशून्य होने से बचाना है।

वास्तव में युगानरूपता ही साहित्य की सार्थकता होती है। इसके लिए साहित्य में पाठक की रूचि, मनोरंजन की शक्ति तथा ग्रहणशीलता भी समाविष्ट होती है। यही कारण है कि कबीर और तुलसी की उक्तियों को हम साधारण जन के मुख से आज भी सुन कसते हैं। जबकि छायावादी अथवा छायोदोत्तर काव्य को यह लोक व्याप्ति नहीं मिल पायी। कारण स्पष्ट है, यह साहित्य पूरी तरह आभिजात्य वर्ग तक तथा साहित्य की कक्षाओं के पाठ्यक्रम तक सीमित होकर रह गया।

संचार क्रान्ति के सााये तले रचा जा रहा आज का साहित्य, बीसवीं सदी के आरम्भ में तो पाश्चात्य आधुनिकीकरण से प्रभावित रहा। जिसके कारण भारतीय परम्पराओं का क्षरण हुआ । जीवन के प्रति दृष्टिकोण तथा मूल्यगत परिवर्तन भी आए। यही से कुछ नये मूल्यों की स्थापना भी हुई। परन्तु बीसवीं सदी के अन्तिम दशक से जो विश्ववयापी परिवर्तन आए वे शायद सारे संसार के लिए अकाल्पनिक और अप्रत्याशित थे। यांत्रिकीकरण , महानगरीय बोध तथा स्वचालित यांत्रिकता के कारण मानवीय जीवन एक ओर तो अनेक सुविधाओं से सम्पन्न हो गया था। दूसरी ओर इसके विपरीत प्रभाव भी स्पष्ट दिखाई देने लगे थे। आज आदमी के पास सुविधाओं के अनेक उपकरण तो हैं, किन्तु मानसिक ध्यान–साधना और सामाजिक–प्रेम भावना गौण होती जा रही है। समाज का आधार पारस्परिक निर्भरता और सोाहार्द में माना गया है। किन्तु जिंदगी को यांत्रिक सुविधा सम्पन्न बनाए हुए आज आदमी के पास सुविधाओं के अनेक उपकरण तो हैं, किन्तु मानसिक ध्यान–साधना और सामाजिक–प्रेम भावना गौण होती जा रही है। समाज का आधार पारस्परिक निर्भरता और सौहार्द में माना गया है। किन्तु जिन्दगी को यांत्रिक सुविधा सम्पन्न बनाए हुए आज का आदमी स्वयं एक जीवित यंत्र होकर रह गया है।

वैश्वीकरण के इस नए दौर में सारा विश्व अपनी–अपनी मौलिक विशिष्टताओं को भूमण्डलीकृत नई व्यवस्थाओं से जोड़ रहा है। परिणामस्वरूप संस्कृति, साहित्य , भाषा, व्यवहार और जीवन की नैतिकता सब बदल रही है। विश्व के वर्चस्ववादी देशों को बहुराष्ट्रीय कम्पनियों में विश्व व्यापार संगठन और मुक्त व्यापार के नाम पर सारे संसार को अपने उत्पादों के प्रयोग हेतु मण्डियों और बाजारों में बदल दिया है। इसी में दोनों महायु(ों की औपनिवेशिक प्रवृत्ति के अंकुर तथा उसी व्यवस्था के पुनरागमन की आशंका भी छिपी हुई है। विगत सदी के अनेक विचारात्मक आन्दोलन अन्तर्राष्ट्रीयता के भँवर में विलुप्त होते जा रहे हैं। सोवियत संघ के विघटन ने साम्यवादी वैचारिकता की विफलता को सि(कर दिया। उधर भारत जैसे विश्व के विराट्तम लोकतन्त्र में चुनावों के दौरान हिन्सा, सत्ता के लिए अपवित्र गठबन्धन , राजनीतिक मूल्यहीनता तथा सार्वजनिक भ्रष्टाचार ने गाँधीवादी विचारों को राजनीतिक स्वार्थ सि(ि का माध्यम बनाकर उसको प्रतीकात्मक उपयोग तक सीमित कर दिया।

संचार माध्यमों से प्रतियोगिता करता हुआ आज का साहित्य, अब तक के सबसे चुनौतीपूर्ण समय से गुजर रहा है। वर्तमान शताब्दी का आरम्भ जिस सूचना तंत्र के चमत्कारों के साथ हुआ है, उसमें प्रकाशित साहित्य के सामने गंभीर संकट उत्पन्न हो रहे हैं। कभी समय था जब समाज में पत्रों के माध्यम से दूर–दराज के मित्रों, रिश्तेदारों आदि से भावात्मक संप्रेषण हुआ करता । इसी में प्रेमपत्रों का अपना एक अद्वितीय स्थान था। किन्तु मोबाईल–क्रान्ति ने पत्र संस्कृति को जैसे पूरी तरह समाप्त कर दिया है। सूचना साधनों में रेडियो तथा ट्रान्जिस्टर के आगमन तक तो फिर भी सामाजिक सोहार्द बचा रहा था। क्योंकि ये कवेल श्रव्य–माध्यम थे। हमारी पीढ़ी के लोग यदि अपने बाल्यकाल को याद करें तो सन् 1965 का भारत पाक यु(, 1971 का बांग्लादेश मुक्ति यु(तथा अनेक राष्ट्रीय – अन्तर्राष्ट्रीय घटनाएँ समूह में बैठकर सुनी जाया करती और उसी बैठक या घर में सामूहिक विचारों का आदान–प्रदान भी हो जाया करता। इसी बहाने गलियों–मोहल्लों में एक स्वस्थ सामुदायिक भावना का विकास भी होता रहता था। क्रिकेट मैचों की कमेंटरी सुनते हुए केवल सुनकर ही पूरा समूह भारतीय खिलाड़ियों के प्रदर्शन पर दाद दे लेता और उनके घटिया प्रदर्शन पर निराश की प्रतिक्रिया व्यक्त कर देता था। परन्तु आज यदि हम बदली हुई सामाजिक स्थितियों का सर्वेक्षण करे तो संचार–क्रान्ति के कारण समाज से नुक्कड़ सभाएँ, चौपाले, बड़ी बैठकें लगभग समाप्त हो चुकी है। यदि मेरे आंकलन में कोई बड़ी भूल नहीं है तो नगरों तथा उपनगरों में ही नहीं गाँवों तक में जिन घरों की बैठकें सड़क या गली के साथ खुलती थी, उनको स्थिति अनुसार दुकानों में बदल दिया गया है। सार्वजनिक टेलिफोन सेवाएँ तो गाँवों से आगे निकलकर छोटी–छोटी ढाणियों तक में प्रसार पा चुकी है।

विश्व – परिवार के नाम पर व्यापार, विज्ञान तथा सार्वभौमिक संस्कृति के निर्माण का सुनहरा सपना हमारी सांस्कृतिक मौलिकता को लील रहा है। धीरे–धीरे यह सच्चाई स्पष्ट होने लगी है कि विश्व की अकेली शक्ति अर्थात 'अमेरिका' संचार–शक्ति का भी निरंकुश केन्द्र हो गया है। भूमण्डलीकरण जिस विश्व–ग्राम की संकल्पना पर आधारित था, वह अब ढोंग लगने लगा है। लोकतांत्रिक व्यवस्था के समानता, न्याय और शान्ति के सि(न्तो का प्रयोग संकीर्ण राष्ट्रीय स्वार्थों की पूर्ति का साधन बना कर विश्वव्यवस्था पर स्वेच्छाधारी आचरण को लादा जा रहा है।

संचार –क्रान्ति के विकास के परिणामों को विवेचित करते समय हमें एक–मार्गी होने की पूर्वाग्रही प्रवृत्ति से अपने को अलग रखना होगा। क्योंकि जब हम साहित्य और सूचना माध्यमों के समन्वय पर विचार कर रहे है तो एक साहित्यकार की की सी तटस्थ दृष्टि भी हमें रखनी होगी। संचार –क्रान्ति के प्रभाव से नई वैचारिकता और सांस्कृतिक समन्वय के नए अवसर हमें मिले हैं। संचार–माध्यमों के सम्पर्क ने जन जीवन को बेहद बदल दिया है। आज अभूतपूर्व नवीनता और आधुनिकता के मोह में उलझी सभ्यता का संकट यह है कि 'निर्बाध, नित्य, नवीन गतिमयता के व्यामोह में परम्पराओं का तिरस्कार किया जा रहा है। इतिहास से प्राप्त अनुभवों के विसर्जन और आयातित संस्कारां के प्रति आकर्षण ने साहित्य को स्वाभाविक समाजधारा से विलगा सा दिया है। इसी बात को यदि नए वैश्वीकरण संदर्भों में देखें तो भारत का इन सारे परिवर्तनों से अप्रभावित रह पाना संभव नहीं था। क्योंकि संचार–शक्ति, राष्ट्रीय विकास की अनिवार्यता हो चुकी है।

आज का भारत विकसित राष्ट्रों में सम्मान पाने की साहसिक आतुरता लिए हुए है। संसार के जितने भी शक्ति सम्पन्न देश हैं, विशेष रूप से पूंजीवादी देशोां के लिए संचार–माध्यमों की उपयोगिता और अपरिहार्यता बढ़ती जा रही है। वे अपने संचार –विकास का उपयोग संस्कृतियों में दखल के रूप में कर रहे हैं। यदि स्पष्ट कहें तो संचार–क्रान्ति वर्चस्व संपन्न क्रान्ति अपने आप में अधूरी कही जा

सकती है। इसका यांत्रिक पक्ष तो आशा से अधिक विकसित और समृ(है, किन्तु इसके कारण विकासशील देशों में घोर सामाजिक असंतुलन पैदा हो गया है। एक स्वच्छंद उपयोगितावादी समाज की ओर अग्रसर हो रहा है।

एक स्वछंद उपभोक्तावादी समाज की ओर अग्रसर हो रहे हैं।

भारत में संचार माध्यमों का पिछली सदी के अन्तिम दो दशकों में जो विस्तार हुआ है उसके चलत साहित्य की भावातमक और शिल्पगत प्रवृत्तियों में भी उल्लेंख बदलाव आए हैं। ये सारे परिवर्तन अनेक स्तरीय और विविध रुपों में देखे जा सकते हैं। समकालीन साहित्य में विद्यागत विस्तार तो बहुत आया है किन्तु संचार–क्रान्ति के कारण उनका प्रभावशाली चरित्र उभकर नहीं आ पा रहा है। इसीलिए सामाजिक– राजनीतिक , दशाओं के परिर्वतन में साहित्य का विशेष हस्तक्षेप भी सामने नहीं आता। इस संदर्भ में 'संरचनावाद, उत्तर संरचनावाद और प्राच्य काव्य दर्शन में प्रो॰ गोपीचन्द नारंग के उ(रण को लिया जा सकता है, जिसमें उन्होंने कहा है कि, " मैं नयी व्यावसायिक कार्य पद्वतियों ने उपभोक्तावाद के ऐसे रूपों को उत्पन्न कर दिया जिनकी कल्पना तक नहीं की जा सकती थी। कम्प्यूटर विभाग ने ज्ञान के स्वरूप एवं उसकी आवश्यकता को बदल कर रख दिया। प्रौद्योगिकी की क्रान्ति के चलते ज्ञान की गरिमा विलुप्त हो गयी है। ज्ञान अब पूर्णतः वैज्ञानिक शक्तियों के संरक्षण में आ गया है। ज्ञान व्यक्तित्व का हिस्सा नहीं। पहले तो हम ज्ञानियों को मानते थे। बड़े–बड़े ज्ञानी हैं, महात्मा हैं, लेकिन अब ज्ञान व्यक्तित्त्व का भाग नहीं रहा, मंडी का माल है। खरा सत्य है जिसकी खरीद फरोक्त सम्भव है। पहले ज्ञानार्जन हेतु जीवन खपाये जाते थे। ...... अब ज्ञान की मण्डी का वस्तुओं की तरह थोक उत्पादन हो रहा है। कंप्यूटर में थोक उत्पादन हो रहा है। मास प्रोडक्शन हो रहा है और साबुन और टूथपेस्ट के समान ज्ञान बिकाऊ माल है। जब चाहे उसे क्रम कर सकते हैं, जब चाहे उसे पृथक कर सकते हैं। यह ज्ञान नहीं चाहिए इसे छोड़ दो। ज्ञान के लघुकरण के बाद उसका व्यासायिक शोषण दैन दिन जीवन की परिपाटी बन गया है। जैसे जैसे समाज उत्तर आधुनिक युग में प्रविष्ट होते जाएँगे वैसे–वैसे ज्ञान का वह भाग जिसे विद्युत मस्तिष्क हेतु सुपाच्य नहीं बनाया जा सकेगा या जिसका विद्युत विलमन न हो सकेगा वह पिछड़ जाएगा।" ज्ञान के इसा बाजारीकृत रूप में साहित्य, जिसका सम्बन्ध विशु(रूप से मन की अनुभूतियों से होता है उसकी स्थिति तो और अधिक विडम्बनापूर्ण हो जाती है। आज साहित्म हमें एकान्त में खड़े अजनबी सा लगता है और समाज– यथार्थ को मीडिया की आँखों से देखा जा रहा है।

आज साहित्य के माध्यम से किसी बड़े आन्दोलन की आशा नहीं की जा सकती। लेकिन चेतना को जम जाने, संवेदना को तरंगित रखने तथा अभिव्यक्ति को जीवित रखने के लिए साहित्य के महत्त्व को कभी भी नकारा नहीं जा सकता। जिस संचार क्रान्ति की जकड़ में आज विश्व का प्रत्येक व्यक्ति जकड़ा हुआ दिखाई देता है, उसको तोड़ने और शिथिल करने में साहित्य की भूमिका बहुत महत्त्वपूर्ण हो सकती है। वैज्ञानिक अन्वेषाओं के अपरिभित विस्तार से चाहे मानवीय व्यवहार और सामाजिक– सांस्कृतिक मूल्य कितने ही प्रभावित हो, जड़ता को तोड़ने में साहित्य की शक्ति का विश्वास कभी कम नहीं होगा। साहित्य के प्रति इसी आस्था और विश्वास की अभिव्यक्ति 'कविता की श्यामल छाया' शीर्षक की कविता में जुग मंदिर तायल ने इस प्रकार की है–

जब दुकान इतनी लुभावनी हो जायेगी
कि कोई उसके पास ठहर नहीं सके,
जब रोशनी इतनी तेज हो जायेगी
कि उसकी चुभन से कोई बच नही सके,
जब विज्ञापन इतने चपल हो जायेंगे
कि उनकी क्रीडाओं से डर लगने लगे
हमें कविता की याद आएगी।

मित्रों! आज साहित्यिक अभिव्यक्ति और शब्द –शक्ति को लेकर चिन्ता होना स्वाभाविक है। साहित्य को इतनी विषम विकट स्थितियों का सामना पूर्व में नहीं करना पड़ा था।

आज इस कठोर प्रतिस्पर्धा से घबराकर क्या साहित्य सृजन परास्त–मौन स्वीकार लेगा। मेरा मानना है नहीं, कभी नहीं। इतना अवश्य है कि आज के इखरे–बिखरे विश्व में अनेक विषयों और समस्याओं से रूबरू होता हुआ, साहित्य, युग–नायक की भूमिका निभा दे, अथव विश्व के लिए सारी समस्याओं और विषयों को समाविष्ट करके कोई विराट नियामक ग्रन्थ रचदे यह तो संभव नहीं किन्तु इतना अवश्य है–

रातों के अन्धेरों में,
सूरज नहीं दिखता है।
सराहो उस दीप को,
जो चीर अन्धकार का वक्ष
आलोक –किरण लिखता है।

आगत के लिए साहित्य की असीम अपरिमेय स्वर्णिम दिशामयी शक्ति और प्रगति की आशान्वित शुभ कामनाओं सहित........

Publish Research Article
International Level Multidisciplinary Research Journal For All Subjects

Dear Sir/Mam,

We invite unpublished Research Paper,Summary of Research Project,Theses,Books and Book Review for publication,you will be pleased to know that our journals are

Associated and Indexed,India

- ✶ International Scientific Journal Consortium
- ✶ OPEN J-GATE

Associated and Indexed,USA

- EBSCO
- Index Copernicus
- Publication Index
- Academic Journal Database
- Contemporary Research Index
- Academic Paper Databse
- Digital Journals Database
- Current Index to Scholarly Journals
- Elite Scientific Journal Archive
- Directory Of Academic Resources
- Scholar Journal Index
- Recent Science Index
- Scientific Resources Database
- Directory Of Research Journal Indexing

Golden Research Thoughts
258/34 Raviwar Peth Solapur-413005,Maharashtra
Contact-9595359435
E-Mail-ayisrj@yahoo.in/ayisrj2011@gmail.com
Website : www.aygrt.isrj.org